उत्तरा

[खण्ड-काव्य]

रचयिता
प्रो० श्रीसुरेन्द्र झा 'सुमन'

उत्तरा

[खण्ड-काव्य]

रचयिता

प्रो० श्रीसुरेन्द्र झा 'सुमन'

संस्करण, १९८०
मूल्य ३ टाका

प्रकाशक
मैथिली-मन्दिर, दरभंगा

मुद्रक
श्रीभूपेन्द्र झा
मिथिला प्रेस, दरभंगा

पूर्वा—

प्रायः पन्द्रह-सोलह वर्ष पूर्व । मुख्यतया अपन सहयोगी प्राध्यापक-बन्धु डा० श्री शैलेन्द्रमोहन बाबूक आग्रह भेल जे मैथिलीमे खण्डकाव्यक अल्पता अछि, अतएव एहि दिशामे किछु प्रयास वांछित ।

दिन बितैत गेल, बीच-बीचमे अन्यान्यो स्निग्धबन्धुक आग्रह प्रेरित करैत रहल । ओहि क्रममे सहसा ई स्फूर्ति भेल जे नाटकमे जेना धीरोदात्तप्रकृतिक पुरुष पात्रक प्रधानता रहैछ ओ नाटिकामे ललितप्रवृत्तिका नायिकाक, तहिना किएक ने महाकाव्य-पौरुषपरक पुरुषप्रधान ओ खण्डकाव्य कलात्मिका नारी-प्रधान रूपेँ ग्रथित-प्रथित हो ?

तदनुरूपे हम खण्डकाव्यक रचनाक हेतु नारी-पात्रक चयन करय लगलहुँ तँ तीन गोट नारी-प्रतिमा हमर दृष्टिकेँ आकृष्ट कयल : उत्तरा, उषा ओ देवयानी । उत्तरामे नृत्य-संगीत कलाक शिक्षा-दीक्षाक संगहि वीराङ्गनोचित साहसिकताक विलक्षणता लक्षित भेल, तँ स्वप्नसुन्दरी उषामे चित्ररेखाक संगिनी रूपेँ ललितकलाक आकलनक संगहि प्रेम वरणक प्रवणता प्रतीत भेल । एवं असुरगुरु कवि उशनाक आत्मजा देवयानीमे सुरगुरुपुत्र कचक राजनीति-कताक अनुगमनहुमे उद्दाम प्रेम ओ मान - ईर्ष्याक रौद - छायाक विचित्रता परिलक्षित भेल । तीनू पात्रीक विशेषता उपर्युपरि—ककरा चुनल जाय, ककरा छोड़ल जाय ?

अन्ततोगत्वा तीनू हमर रचनाक आकर्षण बनलीह। सुतरां, उत्तराक चारि सर्ग ओहि बीच लिखल गेल ओ तीन सर्ग आइसँ दस वर्ष पूर्व प्रेसमे छपिओ गेल। स्वयंवरा उषाक किछु सर्ग ओ संजीविनीक किछु अंशक रचना सेहो संगहि चलैत रहल।

किन्तु १९६९-७० सँ विशेषतया विभिन्नस्रोतवाही शिक्षा ओ राजनीतिक गंगा-यमुनाक सिताऽसित प्रवाहमे साहित्यिकता अन्तःसलिला सरस्वती बनलि रहलीह। अध्यापन ओ राजनीतिक द्विविध व्यस्ततामे क्षणो नहि, रचना-भावनाक कणो नहि!

एम्हर परिवर्तित जीवन-क्रममे जे अवसर-अवकाश भेटल अछि, अपन स्वास्थ्य-अवस्थाकेँ देखैत, अपूर्ण रचनाकेँ पूर्ण करबाक यथाशक्ति प्रयासमे छी।

उत्तराक पूर्वापर सर्ग अद्यतन-अनद्यतन रूपेँ ग्रथित भय सद्यः प्रकाशित अछि, जकरा साहित्यरसिकक आगाँ—मातृभाषानुरागी सहृदय पाठकक आगाँ—सविनय सस्नेह उपहृत करैत आत्मतृप्तिक अनुभव कय रहल छी।

'एतावत् सरसिजकुड्मलस्य कृत्यं
भित्त्वाऽम्भो बहिर्विनिर्गमो यत्।
आमोदो विकसनमिन्दिरानिवासः,
तत्सर्वं दिनकरकृत्यमामनन्ति॥'

श्री सुरेन्द्रझा 'सुमन'

रक्षाबन्धन—(श्रावणी पूर्णिमा)
(१९८०)

अवतरणिका

भारतीय निबन्ध-काव्यक अधिकांश कथावस्तुक मुख्य आधार रामायण, महाभारत ओ भागवत रहल अछि। ताहूमे अपन विपुल कथा-विस्तारें, पुरुषार्थ-चतुष्टयक विशेष विचारें तथा प्राक्तनो गाथा, कथा ओ तत्त्व-विचारक समाहारें महाभारत यावतो भारतीय भाषामे लिखित काव्य-साहित्यक विविध विधाक हेतु सर्वोपरि उपजीव्य ग्रन्थ रहल अछि। प्रस्तुत खण्डकाव्य सेहो ओहीपर आधृत अछि।

पुरातन विश्वक कोनो देश वा काल खण्डमे महाभारत सन व्यापक युद्धकथा इतिहासमे उपलब्ध नहि। कौरव-पाण्डवक दायादी विवाद कोना सम्पूर्ण भारतकें युद्धाग्निक ज्वालामे झोंकि देलक, कुल-कलह कोना धर्माधर्मक संघर्षमे परिणत भेल, ई तत्कालीन भारतीय सामाजिक राजनीतिक इतिहासक अपूर्वता कहल जायत। महाभारतक अधिकांश पात्र चारित्रिकता, यौद्धिकता, कूटनीतिज्ञता ओ रुचि-प्रवृत्तिक विभिन्नताक कारणें विलक्षण व्यक्तित्व रखनिहार, एक-पर-एक, भेटताह—जहिना पुरुष पात्र, तहिना नारी पात्रो।

प्रस्तुत काव्यमे जे नायक-नायिका छथि ओ, महाभारतक मुख्य नहि सहकारी पात्र चरित्र छथि। हिनक व्यक्तित्वक निखार महाभारतक अल्पतमे अंशमे अभिव्यक्त अछि। किन्तु ओतबे अंशमे—अज्ञातवासक अन्तिम कल्प ओ अठारह दिनव्यापी युद्धक कतिपय दिनमे जाहि रूपें चित्रित अछि ओ सर्वथा आकर्षक अछि। नायक अभिमन्युक वीरता ओ नायिका उत्तराक धीरता महाभारतीय पात्रमे हुनकालोकनिकें प्रथम पंक्तिमे जेना अधिष्ठित कय गेल हो।

'उत्तरा'क कथावस्तु महाभारतक विराटपर्व ओ द्रोणपर्वक किछु अंशसँ सम्बद्ध। प्रसंगतः किछु आनो प्रसंगकें स्पर्श करैछ। किन्तु काव्यमे कथाक रेखा मात्र लेल गेल अछि, रंग-दीप, काट-छाँट, वेश-परिवेश रस-रीतिक अनुरूप स्वतः होइत गेल छैक। कला-कौशलकें ओज-दीप्तिमे, यौद्धिकताकें बौद्धिकतामे, शक्तिकें भक्तिमे परिणत करबाक दिशा कथावतरणक स्वाभाविक गतिवेगें प्रशस्त होइत गेल अछि।

पूर्वपीठिका—

कुरुवंशी विचित्रवीर्यक प्रथम सन्तान धृतराष्ट्रकें जन्मान्ध रहबाक कारणें द्वितीय पुत्र पाण्डुकें राज्यसिंहासन पर अधिष्ठित कयल गेल। किन्तु हुनक हठात् मृत्यु मेलाक बाद पुनः धृतराष्ट्रहिक अभिभावकत्वमे पंच-पांडवक शैशव व्यतीत होइछ। स्वभावतः राज्यपर धृतराष्ट्र ओ हुनक पुत्र दुर्योधन, दुःशासन आदि कौरव हावी भय उठैछ। ओ द्वेषवश कुन्तीसहित पाण्डवकें लाक्षागृहमे भस्मसात् करबाक योजना दुर्योधन द्वारा कयल जाइछ। कुलवृद्ध विदुरक पूर्व संकेतें पाण्डव लोकनि अग्निकांडसँ पूर्वहिं सुरंग बनाय गुप्तरूपें ओतयसँ बाहर भय जाइत छथि। पांडवलोकनिक मृत्युक समाचार प्रजामे व्याहृत होइछ। पुनः द्रौपदी स्वयंवरमे पांडव प्रकट होइत छथि। तखन राज्यक अधिकार क प्रश्न उठैछ। अन्ततः संग-समाज ओ प्रजा-पूतक सहानुभूतिएँ तकर अंश प्राप्त करैत छथि। राजधानीक लेल श्रीकृष्णक निर्देशानुसार खांडववनकें उपटाय ओतय इन्द्रप्रस्थ (वर्तमान दिल्ली) नवनगर असुरशिल्पी मय द्वारा प्रस्तुत होइछ। ओतहि राजसूय यज्ञक योजना द्वारा प्रभाव विस्तारक योजना चलैछ। यज्ञमे आमंत्रित ईर्ष्यालु दुर्योधन हुनक विभूति देखि ओ सभामे जल-स्थलक भ्रमक कारणें अन्धपुत्रक उपहाससँ अपनाकें अपमानित अनुभव करैछ। फलतः कूटनीतिज्ञ शकुनि आदिक विचार लय युधिष्ठिरकें द्यूतक्रीडाक हेतु हस्तिनापुर राजधानीमे आह्वान कयल जाइछ। ओतहि जुआरो युधिष्ठिर सर्वस्व हारि द्रौपदी धरिके दाओपर चढ़ा देत छथि। चीर हरणक दुःसह प्रसंग ओतहि घटित होइछ। अन्तमे द्यूतक खेल एही शर्तपर चलैछ जे यदि पांडव जीतथि तँ राज्य-सम्पत्ति सभ वापस लय लेथि, और जँ हारि जाथि तँ बारह वर्ष वनवास ओ तेरहम वर्ष अज्ञातवास करथि। यदि कदाच अज्ञातवासक अवधिमे देखार भय जाथि तँ पुनः हुनका वनवास जाय पड़तन्हि। शकुनिक कपटद्यूतमे पुनः युधिष्ठिर हारि जाइत छथि ओ हुनका वनवास लिअय पड़ैत छन्हि। पुनः बारह वर्ष वनमे विताय, तेरहमवर्ष अज्ञातवासमे रहबाक निमित्त ओ मत्स्य देशक विराटनगरमे राजा विराटक आश्रयमे शरणार्थी भय उपस्थित होइत छथि। ओही प्रसंगसँ प्रस्तुत काव्यक आरम्भ होइछ।

सम्बद्ध चरित्र ओ वर्णित प्रसंग—

उत्तरा—राजा विराटक कन्या; कलाक शिक्षार्थिनी, अभिमन्युक वीर-पत्नी। पाछां पुत्र परीक्षितक मार्गदर्शिनी, रूप-गुण, कला-शिक्षा ओ धैर्य आदिमे अनुपमा काव्यक चरितनायिका।

अभिमन्यु—अर्जुनपुत्र, श्रीकृष्णक भागिन, उत्तरा पति; महाभारतक अन्यतम युवा योद्धा। चक्रव्यूह तोड़ैत, सप्तमहारथी द्वारा निहत नायक।

पञ्च पांडव–द्यूतकपटमे कौरवसँ बाजी हारि बारह वर्षक वनवास ओ एकवर्ष अज्ञातवासक सजायाफ्ता, पांडुक पांचोपुत्र। युधिष्ठिर (धर्मराज) जे विराटनगरमे कंक नामसँ राजा विराटक दरबारी बनि समय कटैत छथि, पुनः महाभारतमे विजय प्राप्त कय राज्यपदासीन होइत छथि। द्वितीय पांडव भीम; वल्लव नामसँ विराटक पाकशालामे नौकरी करैत कीचकक बध करैत छथि। तृतीय मध्यम पांडव अर्जुन; जे वृहन्नला नामे अभिशापित हिजड़ा बनि उत्तराकेँ नृत्य-संगीतक शिक्षा दैत छथि। उत्तरकुमारक सारथी बनि कुरुदलकेँ पराजित करैत छथि, ओ युद्धमे चक्रव्यूहगत अभिमन्युक हत्याक निमित्त मानि जयद्रथकेँ बध करैत छथि। माद्रीपुत्र नकुल-सहदेव क्रमहिँ ग्रंथिक ओ तंतिक नामे घोड़सार ओ गोशालाक प्रबन्धक बनि अज्ञातवासमे रहैत छथि।

विराट-परिवार–राजा विराट स्वयं मत्स्यदेशक शासक छथि। राजधानी विराटनगर। अज्ञातवासमे पांडव लोकनिकेँ शरणार्थी रूपेँ काजमे नियोजित कयनिहार। रानी सुदेष्णा विराटक पत्नी; कन्या उत्तराक दाक्षिण्यशीला अभिभाविका, भाइ कीचकक नीचतासँ क्षुब्ध रहितो हुनका पर ममता रखनिहारि छथि। उत्तर राजकुमार वृहन्नलाकेँ सारथी बनाय कौरवसँ लड़य जाइछ किन्तु विजयक मूल कारण वृहन्नला अर्जुने थिकाह, हम नहि, से सत्यविवरण दय अपन सौजन्य व्यक्त करैछ। शंख वा श्वेतकेतु हुनकहि भाइ दुर्योधनपक्षी त्रिगर्तराजक संग मोर्चापर लड़य जाइछ।

द्रौपदी--महाभारतक मुख्य नायिका, जनिक चीरहरणक अपमानक बदला कुरुकुलक संहार भेल। पांडवक सततसंगिनी प्रियतमा, अज्ञातवासहु मे संग रहि, सैरन्ध्री बनि, विराट राजाक अन्तःपुरक शृङ्गारसाधिका, कीचकवधक प्रेरिका।

श्रीकृष्ण--महाभारतक वास्तविक नेता छथि; पांडवक संबंधी ओ पक्षधर। अर्जुनक सारथ्य करैत अपन परामर्शसँ पांडवकें विजयी बनबैत छथि। ओ संकट-विकटमे ज्ञान ओ कर्मयोगक उपदेश दय मार्गप्रदर्शन कयनिहार भगवान् वासुदेव रूपें मान्य छथि।

पांडव-परिवार--धृष्टद्युम्न द्रौपदीक भाइ, पांडवसेनाक नायक। द्रुपद, पांडव-श्वसुर। विराट; अभिमन्युक श्वसुर एवं अन्य सात्यकि आदि योद्धा। कुन्ती (पृथा) पांडवक माता। सुभद्रा; अर्जुन-पत्नी, कृष्णसोदरा, अभिमन्युक जननी।

कौरव-परिवार--महाभारतक खलनायक, अभिमानी योद्धा कौरवक नेता ओ दुःशासन आदि सभभाइमे जेठ युवराज, पांडवकें सीदित कयनिहार। हुनक पिता राजा धृतराष्ट्र अन्ध ओ दुर्योधनक रुचिपर चलनिहार। कौरवपक्षीय प्रथम सेनापति भीष्म, दस दिन धरि युद्ध संचालन करैत, महान् व्यक्तित्वक, ज्ञानी, मानी, तत्ववेत्ता कौरवक पक्षपर रहितहुँ पांडवक प्रति सहानुभूति रखनिहार। द्वितीय सेनापति गुरुद्रोणाचार्य, धनुर्विद्याक महान् शिक्षक, चक्रव्यूह प्रणेता। कर्ण दुर्योधनक प्राण-सखा ओ महान् योद्धा ओ दानी। एकर अतिरिक्त विदुर, व्यास आदि वृद्धसिद्ध एवं शल्य संजय, आदि नामक उल्लेख यथाप्रसंग होइछ।

अक्षौहिणी संख्या--वर्तमान फौजी डिवीजन जकाँ, प्राचीन भारतीय युद्धमे वृहत्तम सेना-संहतिक नाम थिक। जाहिमे गज २१८७ रथ २१८७ अश्व ६५६१० ओ पदाति १०९३५० क संख्या रहैछ। कौरवपक्षसँ ११ ओ पांडवपक्षसँ ७, कुल १८ अक्षौहिणी सेना महाभारत युद्धमे निहत भेल।

कुरुक्षेत्र--धर्मक्षेत्र रूपमे प्रसिद्ध अछि। विशाल परती-परांत रहने प्राचीनकालहिसँ युद्धक प्रशस्त मैदान छल। महाभारत ओतहि लड़ल गेल।

चक्रव्यूह--युद्धक एक व्यूह, जकर रचना सेनापति द्रोण कयलन्हि, मुख्य द्वारपर जयद्रथ रहथि। अर्जुनकें प्रवेश-निर्गम ज्ञात छलन्हि, किन्तु अभिमन्युकें तोड़वेक शिक्षा गर्भमे प्राप्त छलन्हि, बहरयबाक नहि।

सप्तमहारथी--द्रोण, कर्ण, कृप, कृतवर्मा, अश्वत्थामा, वृहद्बल ओ द्वाररोधी जयद्रथ। चक्रव्यूहमे अभिमन्युकें घेरि-बेढ़ि वध कयनिहार सातो महारथी।

उत्तरा

[खण्ड-काव्य]

मंगल : संकेत-सूत्र

卐

प्रणय जलधि जल मे निर्वासित श्रुति समुदित जे धर्म ।
मत्स्य रूप पुनि बनि विराट उद्धार कयल शुचि कर्म ।।
पञ्च-जन क हित पाञ्चजन्य-धर कय दुःशासन अन्त ।
मन्यु रहित उत्तरायति क हित सुपरीक्षित रसवन्त ।।

卐

प्रथम सर्ग

मत्स्य जनपद :

मत्स्य न ई, जकरा मलाह क्यौ जाल बझाबय ।
हिंसाजीवी अपन जीविका जतय चलाबय ।।
ई न परस्पर भक्ष्य-भक्षक क न्याय सिखाबय ।
ने भय लुब्ध एतय क्यौ वंसी-बिद्ध कहाबय ।।

एतय न शकुनि क दाओ-पेँच बल वंचन चलइछ ।
विपद्-अनल पड़ि एतय न कखनहुँ कंचन गलइछ ।।
एतय न अंध-मदांध राष्ट्र धृत नीति क नाशी ।
दावानल दावा न करय वन वंश-विनाशी ।।

कुरु क चक्र नहि एकर राजपथ पर कहुँ घुमइछ ।
ने दुर्योधन-युद्ध भयेँ योद्धा क्यौ झुकइछ ।।
भीष्म क भीषणता न द्रोण रण-कर्कश गर्जन ।
ने पुनि शल्य क वेध, खेद नहि कौरव तर्जन ।।

दुःशासन क मानि शासन ने आसन बैसय ।
कर्ण कर्णगत होइतहुँ नहि मन मे भय पैसय ।।
जयद्रथ क रथ-चक्र स पथ मे पाओल जाइछ ।
ने द्यूत क छल रने-वने बौआयल जाइछ ।।

वक्र ऊह कय, चक्र व्यूह नहि रण क रंग मे ।
रहथ न ठामहुँ अश्वत्थामहु वध तरंग मे ॥
मन्यु क भाव अभाव, परीक्षित अर्थ गर्भिते ।
कृष्ण पक्ष रहितहुँ स्वच्छहि दल पार्थ अर्चिते ॥

ने सुनने अछि कथा, एतय जे पड़ल अकालो ।
ने देखने अछि, पिता अछैतहुँ मरइत बालो ॥
ने बुझने छै' ककरहु कहियो रिपु-अभियानो ।
ने तनने अछि रोग-शोक केर करुण वितानो ॥

सभ दिन उत्सव, सभ केँ सभ खन सभ कें हकारे ।
बन्धु परस्पर, ककरहु नहि वैर क व्यवहारे ॥
अछि निर्माण क जोस, रोष ध्वंस क नहि सोचय ।
सन्धि-समास क आगाँ विग्रह-वाक्य न' रोचय ॥

ई जनपद थिक मत्स्य, निरापद अछि पद-पद जन ।
देश-कोश ई जकर उदेशेँ अवइछ गुनि जन ॥
जन क मन क हित विदित कसौटी, गुण सुवर्ण जत ।
चमकि-दमकि होइछ मान क भूषण मे परिणत ॥

मत्स्य पताका कामदेव केर यथा पुराने ।
सजल भूमि केर सरस सरोवर मीन प्रधाने ॥
मीनाक्षी केर अंग-अंग मे नयन महाने ।
आर्य-भूमि केर मत्स्य देश ई केतु समाने ॥

विराट नगर :

ई थिक नगर विराट, जकर राजा विराट छथि ।
गुण-मणि मंडित, रिपु-वध पंडित, बल क ठाठ छथि ॥

नगर सगर अछि सजल, सजल नद-नदी बाट अछि ।
चंदन रस सँ सिंचल, रचल निधूलि बाट अछि ॥

दुर्ग दुर्ग बड़, अति उतुंग गुम्बज नभ चुम्बित ।
जतय अटारी टारि-टारि घन उन्नत लम्बित ॥
फटिक क फाटक द्वार-द्वार तोरण रुचि मण्डित ।
देखि सुशोभा अमर-नगर नागरिक अचम्भित ॥

अछि प्राचीर चीर सम परिसर चित्रावरणा ।
चमचम करइत नानाविध आयुध - विभूषणा ॥
मस्तक विजय-स्तम्भ जकर पुनि नयन झरोखा ।
वातायन कें देखि कामहि क होइछ धोखा ॥

दन्त सौध केर पंक्ति, अधर मृदु अरुण पताका ।
जाँघ कञ्चन क खाम्ह रत्न-आभा वृत पाखा ॥
रोमावलि उद्यान, कूप नाभी रस भरिता ।
बन्दनवार किंकिणी, कृश कटि गली सुरचिता ॥

हरित-भरित उपवन विचित्र परिधानी धानी ।
पहिरि विहरि रहली धनि-धनि नगरी रजधानी ॥
पुरुष विराट क प्रीति रीति नित मुदित अनन्या ।
पुरी परम रमणीक नवल रमणी सन धन्या ॥

नगर जलाशय, नागर-नागरि बदन कमल जत ।
शुचि शैवाल सुकेशी वृन्द क अलक लुलित कत ॥
बलवर गज-रथ-हय-पदाति चतुरंग सुसज्जित ।
सेनानी कीचके कीच अछि जतय निमज्जित ॥

विराट-परिवार :

नगर पर्वते बनल, विराटे तुङ्ग शृङ्ग छथि ।
उत्तर-श्वेतकेतु दुइ नृप-सुत पार्श्व अङ्ग छथि ॥

सैन्य कटक अछि कंटक, महल गिरि-तरु आनंत अछि ।
सिंह व्याघ्र सैनिक सभ, रिपु मृग सबल अंत अछि ॥

नगर कमलदह बीच कमलिनी बनलि सुदेष्णा ।
सखी सहचरी पुरइन दल सँ बेढ़लि सतृष्णा ॥
सुरभि उत्तरा सरस किशोरी नवल वयस शुचि ।
मलय समीर धीर दक्षिण के परसत रचि रुचि ॥

उत्तरा :

चकित कुरंगी सदृशहिं चञ्चल जकर दृगञ्चल ।
वयस वसन्त प्रमाण मलय सुरभित उर अञ्चल ॥
मदन गणित पञ्चाङ्ग मध्य तिथि सुदि चतुर्दशी ।
तारुण्य क पूर्णिमा समीपे उदित शुचि शशी ॥

हँसितहिँ जकरा झहरि पड़ै अछि फूल क थौका ।
तकितहिँ जकरा चमकि चौंकि तड़पइ बिजलौका ॥
बजितहिँ जकरा वेणु विपंचि क हो झंकारे ।
भृकुटि चढ़बितहिँ होय मदन धनुष क टंकारे ॥

गति क पाठ पढ़बा लय जुटइछ हंस - मण्डली ।
जकर स्वर क अनुकरण मात्र कोकिल क काकली ॥
जकर कपोल क लालिमा क प्रतिबिम्ब सेब फल ।
अधर हास - कन बिछइत चुनइत जूही उज्ज्वल ॥

जकर कान्ति सँ जगमग अन्तःपुर अछि सगरो ।
तुलना मे ललना न एक जत गामो - नगरो ॥
जकर रूप - गुण नयन - श्रवण सर्वस्व मनोरम ।
सुषमा सरिता, लता बनलि लावण्य क अनुपम ॥

ककर चरण मे नृत्य नित्य अपनहि बसि गेले।
ककर कण्ठ मे रागिनी क मधु रस बसि गेले॥
स्वयं बनल शैशव गीत क जे चरम अन्तरा।
प्रश्न चिह्न उपमा क, एक उत्तरे उत्तरा॥

प्रवेशिका :

बारह बर्ष बिताय नाचि बन-बन सब नाचो।
देश-कोश केर एहन सुयश सुनि पांडव पाँचो॥
अयला सोचि विचारि तेरहम बितबय साँचो।
वर्ष बिषम अज्ञात द्यूत-छल केर छल आँचो॥

●

[आइ विराट नगरहु क यश केर होयत जाँचो।
की रस दै' अछि देख क थिक रचना रुचि काँचो॥]

Scanned by CamScanner

द्वितीय सर्ग

विराट क राज-सभा :

राजित राज सभा बिच नृपति विराट, सचिव सामंत ।
भट उद्भट नीतिज्ञ सभासद, कलावन्त श्रीमन्त ॥
पण्डित-पुरहित, प्रथित कलाविद, वन्दी-मागध वृन्द ।
जन - जनपद प्रतिनिधि नागरिक-प्रमुख जत जुटल अमन्द ॥

नीति - रीति दैशिक वैदेशिक चर्चा चारु चलैछ ।
आलोचन - प्रत्यालोचन बिच तथ्य विचार सुभैछ ॥
धर्म - अधर्म क संघर्षहु, दैवी दैवी - आसुरी विचार ।
कतय कोना की चलइछ सम्प्रति लोक - वेद व्यवहार ॥

मागध - माथुर चेदि - विदर्भ क द्वारका क प्रति छोह ।
कुरु - पांचाल सङहि चर्चा पुनि पाण्डव - कौरव द्रोह ॥
पूर्व - पच्छिम क दछिन - उत्तर क देश - विदेश प्रसंग ।
आर्य - अनार्य सुजन - दुर्जन, आस्तिक - नास्तिक अनुषंग ॥

काल-यवन आक्रमण कच्छ सीमा पर कोना दुरन्त ।
विदिग धावयी संशप्तक यौधिक अवरोध उदन्त ॥
पुनि देश क रक्षा हित की कर्तव्य राज्य केर युक्त ।
अश्ववाहिनी योजना कुशल, मल्लहु करिअ नियुक्त ॥

कृषीबल क सम्बल पशुधन क उचित संग्रह विस्तार ।
गोधन संवर्धन हित चाही विशेषज्ञ पर भार ॥
भेला कुमार युवक उत्तर युवराज क गहु अधिकार ।
श्वेतकेतु गृहनीति सम्हारथु अर्थ-कोष संभार ॥

तखनहि क्यौ अन्तःपुर अधिकारी दरबारी आप्त ।
कहि उठला, प्रभु हमर विभागहु मे अभाव किछु व्याप्त ॥
पाकालय भांडारिक पद अछि रिक्त चहिअ क्यौ विज्ञ ।
एहिना शृङ्गारिणी अपेक्षित धनि जनि कला-अभिज्ञ ॥

कला प्रभाग प्रभारी कहलन्हि, एम्हरहु एक अभाव ।
नृत्य-कुशल संगीत-कलाविद द्रुत वांछित अछि आब ॥
कला-प्रवीणा कुमरि नवीना उत्तरा क रुचि देखि ।
नृत्य शिक्षण क हित हो योजित योग्य व्यक्ति परेखि ॥

कत प्रसंग चर्चित अनुषंगहि कत किछु विषय उदेश ।
भाव-अभाव, योग-अभियोगहु, साधारणहु विशेष ॥
तावत दौवारिक प्रवेश कय विहित सूचना देल ।
आयल छथि कार्यार्थी किछु बाहर सँ सेवा लेल ॥

सेवा-शरणार्थी :

पंच पुरुष छथि जनिक संग मे श्यामा ललना एक ।
पंच तत्त्व जनु संगत एकत प्राण शक्तिहि क टेक ॥
प्रथम प्रतिष्ठित पुरुष शान्त निर्मल जनु गगन उदार ।
दोसर छथि उद्भंगी पवन समान शक्ति संचार ॥

तेसर तेजस्वी जनु अग्नि शिखा उद्दीप्त शरीर ।
अपर युगल छथि धरणि-धारणा प्रकृति शील जनु नीर ॥
संग तनिक वनिता विलक्षणा चेतना क जनु अंश ।
आयल छथि विराट पुरुष क जनु सन्निधि जीव चिदंश ॥

नृप उत्सुक संकेत सचिव कें कयल, बुझिअ संधानि ।
के छथि, की छथि, कत की अनुभव, कुल शीलहुँ अनुमानि ॥
बुझि-सुझि कयल निवेदन तत्क्षण, छथि जे जन से आप्त ।
वनवासी पाण्डव क भृत्य-गण वृत्ति हेतु संप्राप्त ॥

सदय हृदय भूपति अनुमतिएँ कयलन्हि क्रमहिं प्रवेश ।
आकृति-कृति ओ वचन-रचन सँ परिचय विदित अशेष ॥
प्रथम कंक द्विज अग्रज द्योतित द्यूत कला क विशेष ।
स्वयं अपन लग कयल नियोजित महाराज सावेश ॥

मध्यम वल्लव मल्ल प्रधान पाक-संस्थान निधान ।
देखि मल्लशाला—महानस क हेतु नियुक्त महान ॥
बृहन्नला अभिधान कला-कोमला नृत्य संगीत ।
कृतक क्लीव अक्लीव प्रभावहु रोचित समय क रीत ॥

अर्जल अर्जुन पद अन्तःपुर कला-शिक्षण क लेल ।
राजसुता उत्तरा जनिक अन्तेवासिनि छलि भेल ॥
पुनि उत्तर कुमार हित सहचर चतुर नकुल धय नाम ।
ग्रन्थिक; रथिक तुरंगम दल क प्रबन्ध करथि अभिराम ॥

गोधन संवर्धन हित सहदेवहु डेबल दरबार ।
तंतिपाल बनि श्वेतकेतु कें अंतरंग सहकार ॥
सैरन्ध्री छथि स्वयं द्रौपदी शृंगारक सहकारि ।
तनिक नियोजन उचित सुदेष्णा रानि क लग सुविचारि ॥

क्रिया-कौशल :

बितल समय कत, एकत रहितहुँ पाँचो पृथक रहैछ ।
जनु पंचांबु प्रदेश पंचनद निजें निज धार बहैछ ॥
कखनहु निशि निशीथ मे संगत पांडव बन्धु मिलैछ ।
जेना सिन्धु-सागर मे घुरि-फिरि नद-पंचक उमड़ैछ ॥

कंक युधिष्ठिर द्यूत खेलि बढ़बथि नृप मानस मोद।
बल्लव भीम मल्ल पटु पाक क सभ क करैछ विनोद॥
अर्जुन बृहन्नला नामें रचि क्लीव क वेश विचित्र।
अन्तःपुर मे नृत्य–अभिनय क शिक्षण देथि पवित्र॥

ग्रन्थिक नकुल तुरंगम वाहन फेरथि नव–नव चालि।
तंतिपाल सहदेव सहज गोधन सम्बर्धन-शालि॥
सभ क क्रिया कौशल क निरीक्षण कय विराट भूपाल।
वेतन मान बढ़ाओल, फल कर्तव्य-तरु क तत्काल॥

सैरन्ध्री—पुरन्ध्री क शृंगार-साधिका :

अंतःपुर मे ओम्हर द्रौपदी सैरन्ध्री क प्रवेश।
राजभवन रूपसी लोकनि मे शृंगार क आवेश॥
परिधान क किछु नव प्रकार, भूषणहु क गढ़नि प्रवीण।
अंगराग, सौरभ-परागहु क रुचि शुचि प्रथा नवीन॥

लता पल्लवित रहितहुँ फूल फुलइतहुँ पहिलुक बाग।
जनि वसन्त-श्री आबि सजाओल नव रस सुरभि पराग॥
बुझि पड़इछ श्यामा यामिनि कें ऋतु शारदी तुलाय।
कयल सरस ज्योत्स्ना–शृंगारित शुचि-रुचि नवे बनाय॥

प्रौढ़हु वयस सुदेष्णा रानि क रूप–छबि क नव रंग।
देखि नवोढहु लोकनि विस्मिता छथि शृंगार प्रसंग॥
वृद्ध विराटहु नृपति क चित अछि चकित चमत्कृत देखि।
बुझल कोनहु शिल्पी क तूलिका रंजित चित्र विशेषि॥

रुचिर कलेवर रहओ, यदि न पुनि सरुचि सजाओल जाय।
बिनु खराज चढ़ने मणि-रत्न न महज सहज द्युति दाय॥
किन्तु गीत-स्वर भाव मनोहर ककरहु कण्ठ बसाय।
धनि से जकर हृदय–रस निःसृत कवित रसिक रसदाय॥

रूपवती अन्तःपुरिका—लोकमिक शृंगारित रूप ।
व्यंजित करइछ कलाकारिका कर रुचि केहन अनूप ॥
सैरन्ध्री क क्रिया - कौशल पुर-पुरन्ध्री क बिच सोर ।
पद्मिनी क रस सुरभि भरय कमौ आयलि अकृत्रिम भोर ॥

कुसुम-कीट कीचक क कुदृष्टि :

अस्तु, प्रसिद्धि क फूल फुलायल गाम गमगमा गेल ।
दूर दूर धरि सौरभ लय वन - वात महमहा देल ॥
किन्तु कीट कुसुम क पराग हित गुपचुप अन्तर लीन ।
करइत छल शृंगार - वासना वेधन मन क मलीन ॥

पहलवान बलवान उत्तर क मामा विराट क सार ।
रानि क अनुज, दनुज सम देखिअ मनुजहु पशु साकार ॥
कीचक नीच बीच वंश क जनु रन्ध्र लागि बातास ।
बाजि उठैछ सुरहु बेसुर सैरन्ध्रि क रूप पिआस ॥

अंगित - इंगित काम - तरंगित दनुजोचित मनुजो क ।
भेलि वितृष्णा सुदेष्णा लखि दुर्वृत्ति दुष्ट अनुजो क ॥
कहलन्हि, सती-प्रकृति सैरन्ध्री ज्वलित तेज उद्दाम ।
काम कीट कें भस्म छनहि करते, भेलह विधि वाम ॥

बुझल हमर अछि यद्य एकर पति छथि रक्षक सन्नद्ध ।
अन्तर्हितहु एकर रक्षण मे सतत दक्ष कटिबद्ध ॥
कतबहु कहथि, नीच कीचक उर असरि न होइछ हृष्ट ।
सुनय न हित उपदेश सुहृदहु क बिगड़ल जकर अदृष्ट ॥

कीचक कीच नीच मलपूरित नाली बहबा देल ।
गङ्गहु कें जनु अङ्ग-मगध तट कलुषित करबा लेल ॥
किन्तु जाह्नवी जलधारा जनु होय न अशुचि कथञ्च ।
सैरन्ध्री क पवित्र चरित्र उपर नहि खल क प्रपञ्च ॥

तृतीय सर्ग

कला-शिक्षण :

थिक कला यद्यपि, सकला दिशा अछि एतय व्याप्त ।
ओंकार – शुकी मातंगी संगीतेक आप्त ॥
शारदा स्वयं वीणा वादिनि श्यामा नर्तिनि ।
कमला लय लीला - कमल हस्त मुद्रा वर्तिनि ॥

नाचथि पुरारि पद सुनि नचारि नटराज नाम ।
वंशी टेरथि त्रिभंगि नटवर ब्रजधाम श्याम ॥
नारद वैरागी मड़्बी वीणा हित बेहाल ।
प्रलयहु मे लय पर नचइछ काली – महाकाल ॥

के जीव - जन्तु जग आनन्दें नहि हो गबैत ?
मस्ती मे ककर चरण नहि अपनहि हो नचैत ?
चिन्तन अथवा भाव क आलोडन जौं चलैछ ।
तँ ककर न आँखि - भौंह कर - अंगुलि संग दैछ ॥

के करुण गलित जे नहि मुक्त स्वर हो कनैत ।
प्रिय दर्शन सँ नहि ककर नयन-मथ अछि नचैत ॥
घनश्याम दर्शनें उन्मादित नाचय मयूर ।
गाबय लगइछ दादुर घन धुनिएँ एक सूर ॥

सरिता नचइत चलइछ विभोर सिन्धु क सकोर ।
सागरहु स्वयं रचि जल तरंग बजवैछ जोर ॥
तरु लता पवन नर्तित झूमइछ प्रमुदित विभोर ।
चेतन - अचेतनहु सब तरि संगीत क हिलोर ॥

कंकर न उर पर संगीत क ध्वनि-रेखा निखार ।
के जन्तु एतय जे नृत्य-नाट्य रस सँ उधार ॥
सभ चहइछ अपन शोक कें बनबय श्लोक मधुर ।
सभ पठबय चाहय ध्वनि क दूत प्रिय-प्रणय विधुर ॥

तें गीत व्याप्त, संगीत व्याप्त सभ्यहु-असभ्य ।
नृत्य क गति कंपन हृदय - स्पंदन जेना लभ्य ॥
अछि भोग - योग सब तरि नाद क संवाद इष्ट ।
रस-भावमयी संगीत कला विद्या विशिष्ट ॥

शिक्षण संस्थान :

अंतःपुर सँ सटलहु हटलै किछु रहल जाय ।
ओ बहरभरा रहितहुँ बाहर नहि कहल जाय ॥
अन्दर बाहर दुहु केन्द्र-बिन्दु रेखा मिलाय ।
संस्थान कला - शिक्षण हित छल निर्मित सजाय ॥

भवन क बहिरंग कारु-शिल्प रचना रंजित ।
कत नृत्य - निरत किन्नर - यक्ष क प्रतिमा मंडित ॥
द्वार क अन्तर नटराज क तांडव छवि टंकित ।
जत लास्य - कोमला पार्वती क इंगित अंकित ॥

साज-सज्जा—वेश-परिवेश :

छल वाद्य - वृन्द राखल काँजल - माँजल सजाय ।
नूतन - पुरातनहु देश - देश प्रचलित मङाय ॥

'तत' तार-वितत वीणा-विपञ्चिका रुचि रचाथ।
एकतारहु सँ शततारहु धरि बहुविध जोगाय॥
'सुषिर'हु विवरित सुर वेणु प्रभृति गुंजित मधु धुनि।
'आनद्ध' मृदंग-मुरज गंभीर ध्वनित घन जनि॥
कल रणित मंजु 'घन' वाद्य विविध धातु क मजि-मुजि।
उपकरण जते उपयुक्त सकल राखल सजि-सुजि॥

....

कत धनि-जनि गितगाइनि कलावती जुटलि ततय।
अति प्रीति पुरातन भास रीति मत गीति जतय॥
कत कलकंठी कोकिल-वयनी सुर-धुनि साधथि।
किछु कहथि भजन, किछु सरस कवित-गीतहु गाबथि॥

कत तान-मूर्छना राग-रंजना अभ्यासथि।
किछु राग-रागिनी नव-पुरातनी अभ्यासथि॥
किछु वीणा-वेणु क स्वर-तरंग केर लय रंगति।
कर मुरज-मृदंग क थाप-ठेक-परन क संगति॥

....

कहुँ नृत्योचित परिधान विधानेँ स्यूत-सजल।
कंचुकी शाटिका अन्तर अध-परिधान रचल॥
आंगिक आभूषण कनक रजत मणि-रत्न रमणि।
श्यामल सह-वेणी, शीर्ष चन्द्रिका चूड़ामणि॥

नव रत्न खचित शुचि कर्णफूल कुण्डल कपोल।
नासा-मणि भूषण नखल प्रभा हीरक क गोल॥
ग्रिमहार, वाहु केयूर, पाणि कंकण अमोल।
कांची किंकिन धुनि कटितट, पद नूपुर क बोल॥

नयन क अंजन, अधर क रंजन, शुचि अंगराग।
अनुलेपन-चंदन-अगरु-तगरु कुंकुम पराग॥

अभिनय क वेश-परिवेश रूपकहु रूपणीय ।
सब साधन सज्जित रसवेश अभिनन्दनीय ॥

शिक्षणीय ओ शिक्षक :

छथि राजकीय परिवार क संतति शिक्षणीय ।
ने शास्त्र क रुख, ने शस्त्र क तिख रुखि रक्षणीय ॥
लोक क रुचि, वेद क शुचि—दुहु तट कें बंधनीय ।
शिक्षा क मधुमती दिशा सुसंगत प्रवहनीय ॥

ने शिशु चञ्चल, ने प्रौढ रूढ—दुहु सँ दूरे ।
ने कठिन वज्र, मृदु मोम न—दुहु क मध्य तीरे ॥
ने जड़ आड़े, ने गर्म नर्म—मधु शरद तुलित ।
हो स्वच्छ सरस शिक्षा-भाजन क्यो नवतूरे ॥

....

तहिना ओहने क्यौ चढ़थु शिक्षक क शीर्ष-शृंग ।
पौरुष निर्मम, स्त्रैण क अति मम—दुहु सँ असंग ॥
ओ कलावन्त, नहि व्यसन-वासना लेश अंग ।
नै नर, ने नारि, आत्मावत् जे हो अलिंग ॥

तेहने छथि बृहन्नला नाम क, क्यौ क्लीब नवल ।
छथि केबल कला विषय मे ओ अक्लीब सबल ॥
अछि शिक्षण क्रम किछु दिन सँ नव पद्धति क चलित ।
शिष्या सुविदित उत्तरा नृत्य-अभिनय क कलित ॥

शिक्षा-क्रम :

श्रुति-गत स्मृति-मत आचार्य प्रवर्तित रीति विविध ।
जत वाद्य-गीत, रस-भाव नृत्य—संगीत त्रिविध ॥

सुर सप्त, द्वाविंश श्रुतिहु, द्रुत लम्बित मध्य लयहु ।
औड़व, षाडव, संपूर्ण राग - परिवार सबहु ॥

वादी सम्वादी अनुवादी बिनु वाद - स्वरहु ।
ध्रुव तान - मूर्छना गमक - यमक सुर - लय क क्रमहु ॥
सम शून्य, ताल अगणितहु सोलहो चलित कलहु ।
मात्रा-बल काल अखण्ड खण्डितहु कलात्मकहु ॥

नृत्य क गति अष्ट-विधहु जे चरण क चंक्रमणहु ।
गज तुरग भुजग मृग मीन हंस अहि शिखी क्रमहु ॥
कटि-बाहु-पाणि मुद्रा, भ्रू-दृग गति सरल-वंक ।
तांडव लास्य क अनुकूल कलित तनु-गति तरंग ॥

आंगिक, वाचिक, सात्त्विक, आहार्य क अभिनय घन ।
मार्गी देशी संमिश्र पद्धति क अनुशीलन ॥
स्वर - ताल भाव-मुद्रा गति चित्र बिधान वला ।
जगती बिच सर्वोपरि राजित संगीत कला ॥

शिक्षा - ग्रहण :

जतबा जे ललित कला संगीत क अंग-भूत ।
गायन - वादन - नर्तन अभिनय रस-भाव पूत ॥
सभ सिखा देल गुरु; शिष्या सहजहिँ सीखि लेल ।
जनु व्यास-उक्ति गणपति द्रुत गतिएँ लीखि लेल ॥

गिरि धमइछ हिम, सरिता उर सहजहिँ भरल जाय ।
घन बरिसय, परती धरती उर्वर बनल जाय ॥
स्वाती क बिन्दु मुक्ता-शुक्ति क मुख अमल जाय ।
उपदेश गुरु क अन्तेवासि क रुचि सबल जाय ॥

जे स्वर संगीत क अछि विधान सभ कण्ठस्थे ।
जे नृत्त - नर्तन क अछि वितान पद विन्यस्ते ॥

धारहु क चतुर्विध विधा, अभिनयहु अंगस्थे ।
रूप क दश अष्टोत्तर उपरूपक अभ्यस्ते ॥

परीक्षण - निरीक्षण :

इच्छुक शिक्षक, शिष्या क परीक्षा करथु विज्ञ ।
जे कला - अभिज्ञा जनि, ओ परिजन रस-अभिज्ञ ॥
अछि तदनुकूल आयोजित आजु क रंग-कक्ष ।
सहचरि सब राजसुता परीक्ष्य जननी समक्ष ॥

अछि दर्शक-दीर्घा भरल, जुटलि अंतःपुरिका ।
रानी सुदेष्णा सैरन्ध्री जत सहचरिका ॥
अछि नृत्य-अभिनय क रस-अनुसारी आयोजन ।
प्रियदर्शिनी क शुचि रुचि भावुक अभिनय-नर्तन ॥

नव रस उनचासहु भाव क अनुभव जनि' संगत ।
स्थायी संचारी सात्त्विक अनुभावहु अनुगत ॥
अनुकरण अनुवचन अनुभावन जत कला कलित ।
जत वृत्ति रीति औचित्य उक्ति सभ किछु सुविहित ॥

छथि स्वयं शिक्षके परीक्षकहु विस्मित महान ।
शिष्या क देखि प्रतिभा मेधा धारणा ध्यान ॥
जनि पाबि घनोदय चर-चाँचर उर सस्य-भरित ।
उपदेश - बिन्दु उत्तरा-हृदय मे सिन्धु प्रमित ॥

संवर्धना : उपहार :

शिष्या सुता क रहि रहि रानी छथि प्रशंसिका ।
सैरन्ध्री गुरु - शिक्षण क साधुता दिस अधिका ॥
किछु शिष्य - शिक्षक क अद्भुत गुण बैभव गुनैइछ ।
किछु सुधि-बुधि बिसरि कलानन्द क प्रवाह बहइछ ॥

रानी कहलन्हि, वात्सल्य रस क अभिनय उदार।
संयोग - वियोग मधुरतर सैरन्ध्रि क विचार॥
कतहु मन सँ बीरहु रस उत्साह क निखार।
रस करुण मधुरतम अन्तिमे ई बहुल क बिचार॥

शिक्षण - निरीक्षण क बाद चतुर्दिश धन्यवाद।
रानी देलन्हि गुरु - शिष्या केँ कत साधुवाद॥
पुनि नहि अघाथि उपहृत करइत मणि-रत्न थार।
आनहु दिस सँ बरिसय लागल प्रेमोपहार॥

ग्राहिका गुण क सैरन्ध्री क्षण भरि रहलि मूक।
दासी उदासियहु गुण - पूजन नहि कयल चूक॥
सहसा निज गरौँ उतारि महोज्ज्वल मोति माल।
पहिराओलि, कुमरि उत्तरा लेलन्हि झुका माथ॥

किछु काल कलाकर वृहन्नला छल मूक मुग्ध।
सैरन्ध्री कम्पित-कलेवरा स्मृति-रस विमुग्ध॥
ई हार दिव्य कुलवधू हितहि निहुछल कौलिक।
कुन्ती जे देलन्हि पुत्रवधू केँ कहि मौलिक॥

ई कुल - परम्परागत माला रत्न क अमोल।
पहिरथि कुलवधुए जनिका ऊपर कुल क मोल॥
की बुझि कृष्णा स्मृतिवती माल अर्पलि चुमाय।
उत्तर - अधिकारिणि कोना उत्तरा? नहि बुझाय॥

जे नहि चिन्हैछ, के सैरन्ध्री? के वृहन्नला?
से बुझल दुहु क मन रंजित केवल नृत्य-कला॥
छल किन्तु उत्तरा कलामयी मन - मन गुनइत।
किछु अछि रहस्य दुहु बिच इंगित अंगित बुझइत॥

शिष्यावेश क सङ्गहि वात्सल्य क उत्स नव्य।
स्वामिनि-सुता क आदर, सन्तान सिनेह भव्य॥

हुहु क नव भावित भावना क किछु रङ्ग-रूप ।
बुझता मे अयलन्हि तत्कालहि किछु रस अनूप ॥

अभिहार क नव उपहार कुमारि क हित विशेष ।
छल अस-संस्कार क पुरस्कार रुचि अभिनिवेश ॥
कतबहु सप्तच्छद कास-पुष्प कुमुदोपहार ।
शरद क सब सँ बढ़ि चढ़ि सिङ्गार अछि सिङ्गरहार ॥

× × × ×

सन्ध्या क लालिमा क्रमहि कालिमा मे उदस्त ।
शशिकला उदित दुतिया क भेल किछु छनहि अस्त ॥
छल रङ्गमञ्च उसरल, सब अलि अगुआय चललि ।
अनमनि उन्मनि सैरन्ध्री टा पछुआय रहलि ॥

सहसा तम गाढहि ठाढ़ रोकि पथ क्यौ प्रचण्ड ।
टोकल, उद्धत किछु नर्म-गर्म स्वर खल अखण्ड ॥
जनु पादाहत भुजङ्गिनी कृष्णा क्रोध-क्रूर ।
फुफकारि फणा फटकारि झटकि चलि देल दूर ॥

के छल ओ छाया-प्रेत भयङ्कर ताल-लम्ब ?
अति दुष्ट धृष्ट कामुक निकृष्ट निश्चर प्रलम्ब ?
बिनु कहनहि बुझलक लोक, आन के नगर बीच ?
निश्चय ओ राज-कलङ्क कीचके क्रूर नीच !!

....

जे वातावरण कला क मधुर, से थकत तीत ।
जत रस-चर्चा तत आतङ्क क चर्चा बिगीत ॥
छथि क्षुब्ध एम्हर सैरन्ध्री, क्रुद्ध पुरुष-पंचक ।
सोचथि की दण्ड अखण्ड क ओम्हर सञ्चमञ्च क ॥

●

चतुर्थ सर्ग

कोलाहली प्रभात : आतंक जिज्ञासा

राति अराति क तिमिर-निकर पथ घेरि ।
करइत छल जगती पर अत्याचार ।।
तकर अन्त करबा हित अरुणिम भोर ।
सहजहिं आबि जुमल, विहग क छल सोर ।।
अंत अंधकार क, उषा क सुविकास ।
दिग् - दिगन्त मे पसरल दिवस प्रकाश ।।
गत निशीथ, नभ निर्मल, तिमिर न शेष ।
धीर समीरे दैछ सुखद संदेश ।।
छल हलचल वन - जीवन खग-कुल घोल ।
उठि देखिअ की घटित, घड़ी अनमोल ।।

राजभवन - गगनहु केर क्षितिज क छोर ।
उषा किरण क्यौ छिटइछ प्रभा अथोर ।।
चंचल अंचल पवन प्रभाती मंद ।
विकसित दृग दल, हसित वदन अरविंद ।।
पुछइछ सहचरि सँ—'कथीक थिक घोल ।
ग्राम - नगर पथ सगरो रव उतरोल ।।
मुखरित लोकारण्य, हृदय आतंक ।
प्रातहिँ, की थिक बात ? बुझिअ अविलंब ।।'

'राजकुँवरि ! हम एखनहि सुनल अनर्थ ।
सेनापति कीचक हत निशा निशीथ ।।

ने अस्त्र क प्रयोग, ने शस्त्राघात ।
अंग भंग नहि, सानल माटि क थिम,
तहिना कीचक मुइल पड़ल छथि हंत !
हंता शत्रु दुरंत क ईदृक् अन्त !!
अछि साश्चर्य लोक, आतंकित चित्त ।
गजसहस्र बल सेनापति अत्युग्र ।।
कोना कोन मे नगरक मुइला जाय ?
संग न चर-अनुचर, अनाथ असहाय ।।
क्यो कहइछ—ई थिक दैवी उत्पात ।
बजइछ क्यो, कारण किछु आने बात ।।
जहिए सँ आयलि सैरंध्री नारि ।
कीचक कामुक रहले रूप निहारि ।।
रखइत मन मे पाप कामना नीच ।
करय उपद्रव रनिवासहु बिच-बीच ।।
कहलि चेताय सुदेष्णा रानी देखि ।
गति-विधि भाइक अनुचित-उचित परेखि ।।

'ई रमनी नहि अबला, प्रबला नारि ।
देखिअ नहि कुदृष्टि सँ, धर्म विचारि ।।
बुझने छी, छथि स्वामी हिनकर यक्ष ।
रक्षा हित परोक्ष रहितहुँ प्रत्यक्ष ।।
यदि ककरहु कुदृष्टि पड़, हुनि दुर्दैव ।
संहार क हित उद्यत रहथि सदैव ।।'
बुझि पड़इछ किछु तहिना सन दुर्योग ।
आबि तुलायल एतय क्रूर ग्रहयोग ।।"

चिन्तित-चित भय कुमरि माय लग जाय ।
देखलि, रानी विस्मित कनइत हाय !!

साश्रु नयन गद्‌गद शोकाकुल हेरि ।
सैरंध्री प्रबोधि रहली कत बेरि ।।
रानी कहलनि – 'हन्त ! कही अनुमानि ।
कारण तोही अनर्थक, कही प्रमानि ।।
हम बुझलहुँ रूपसि ! तोँ कुसुमक वृन्त ।
किन्तु आइ की नहि तोँ अहि - विषदंत ।।'
सुनि सैरंध्री नीरव स्तब्ध मलान—
'देवि ! छमिअ, अजान हम किछु नहि जान ।
हम अबला प्रबल क लग छी निरुपाय ।
दैवे रहथि अनाथ क एक सहाय ।।'

नगर - जनपद क बीच व्याप्त आतंक ।
कीचक - वध दुर्घटना पसरि प्रसंग ।।
कोनो यक्ष पक्ष क अछि पड़ल कुदृष्टि ।
सावधान रहबा क प्रयोजन इष्ट ।।
ग्रह क शान्ति दैवी उपद्रव क हेतु ।
क्यौ कह, सैन्य सुसज्जित रक्षा सेतु ।।
पुर बिच आगम-निर्गम पर प्रतिबन्ध ।
अहर्निश सजग सुरक्षा-दल क प्रबन्ध ।।
जे अजान ओ आन जनपद क लोक ।
से नहि रहय पाब पुर बिच निर्धोख ।।
जांच सभक हो जेहि सँ एतय न आँच ।
तखन कुल क कल्याण, विषय ई साँच ।।

क्यौ कहइत छल—कीचक पापे गेल ।
मत्स्य - जलाशय कीचे साफ भेल ।।
बाजल क्यौ– एक क मुइने नहि खेद ।
यम क पड़िकने सगर नगर निर्वेद ।।

× × ×

क्रमशः कीचक - वध घटना संवाद ।
सगर देश मे पसरल वाद - विवाद ।।
छल अवध्य योद्धा विराट केर मल्ल ।
लड़ि-अड़ि सकइछ भीम, भीष्म वा शल्य ।।
कुरुराज क मन मे आशंका व्याप्त ।
की पांडव अज्ञातवास संप्राप्त ?
मत्स्य देश मे बसि कीचक बधि देल ।
एखनहि पता लगाएब, उचित न देर ।।
दूत पठोल सुयोधन चुपहि विचारि,
हृदय जनिक जरइत रह बंधु अरारि ।
बुझि - सुझि सभ वृत्तांत फिरिअ अविलंब,
चार चक्षु थिक नृप क नीति अवलम्ब ।।

गेल गुप्तचर तुरितहिँ नगर विराट ।
कीचक - वध कारण किछु कहल सुझाय—
"रमणी एक रूपसी बसि रनिवास ।
फाँसल सेनापति कें रूप क पाश ।।
यक्ष जकर पति रक्ष गुप्त बलवान ।
हतल सहज भावें, रहस्य अनुमान ।।

किछु परदेशी गुणी राजकुल जाय ।
अर्थनीति रणरीति क बनल सहाय ।।
वर्षाभ्यंतर शिक्षा - कला प्रबन्ध ।
पशुपालन धन - धान्य क वृद्धि प्रसंग ।।
छथि विराट नृप बूढ़ गूढ़ व्यवहार ।
उत्तर शंखश्वेत दुइ राजकुमार ।।
कन्या धन्या उत्तराक गुण - रूप ।
संग समाज विराट क बनल अनूप ।।

अछि विराट राज्य क विकास बर्धिष्णु ।
किन्तु कीचक क बध घटना अत्युष्ण ।।
ओतय एखन चर्चा अछि विषय विशेष ।
कीचक - वध कर्ता क्यौ बल - अतिरेक ।।
मल्ल एक अछि वल्लव नवे नियुक्त ।
शारीरिक क्षमता मे भीमे उक्त ।।
भय सकइछ ओ सैरंध्रा अनुरक्त ।
ककरहु छै संकेत एहन अभियुक्त ।।
जकर कारणेँ कीचक मारल गेल ।
से सैरंध्री द्रुपदा प्रकृतिक मेल ।।
किन्तु न क्यौ बजइछ ई, अति आतंक !
के वृहन्नला, ग्रंथिक, तंत्रिक, कंक ?

अभियानक उपक्रम :—

गुप्तचर क सुनि वृत्त सकल कुरुराज,
सोचय लगला, शीघ्र करिअ को काज ?
यदि पांडव अज्ञात वास तत लेल,
प्रकट करिअ हुनि पुनि वनवासक लेल ।।
पहिनहि ओम्हर त्रिगर्तराज बलवंत ।
मत्स्य देश सीमा पर चढ़थु तुरंत ।।
कहलनि जाय पिता केँ—'हो आदेश,
अभियान क तैआरी मत्स्य प्रदेश ।।
धेनु धन क छथि धनी विराट नरेश ।
उपहारहु नहि पठबथि कुरुक निवेश ।।
होइतहुँ करद न पहुँचाबथि कर भार ।
नहि अपनहु हाजिर हो कुरु-दरबार ।।
कीचक सेनापति बल बनल अभीक ।
नृप विराट पर - पक्ष समर्थक बीक ।।

संग पुरथि नहि रण वा द्यूतहु दक्ष ।
प्रत्युत विद्रोही पांडवहि क पक्ष ।।
सुनइत छी, छथि कतहु ओहो ओहि देश ।
देखक थिक अज्ञातवास परिवेश ।।
एही बीच कीचक अछि मारल गेल ।
क्षति पर पक्ष क, अपन उदयहि क लेल ।।
अभियान क हित तें चाही आदेश ।
भीष्म द्रोण जत वीर चलथु सावेश ।।
दुहू हाथ मोदक, नहि किछु परत्राहि ।
शत्रु क निर्वासन वा कर क उगाहि ।।
यदि पांडव प्रकटित हो पुनि वनवास ।
नहि तँ धेनु तुरग दल आनव खास ।।

ने दृगंध नृप केवल, बुद्धिहु मंद ।
नामहि टा धृतराष्ट्र, राष्ट्र हित फंद ।
'आत्मा वै पुत्रः' श्रुति मत अनुसार,
दुर्योधन दुःशासन स्वयमाकार ।।
सुनि सुत वचन पुछल, संजय क विचार ।
कहलन्हि– पुछिअ विदुर कें नीतिक सार ।।
किन्तु - परन्तु लगाय मन्त्रणा टारि ।
कुरुपति पल भरि रुकि पुनि कहल सम्हारि ।।
'सत्य, विदुर छथि वयसा ज्ञानहु वृद्ध ।
दान धर्म व्यवहार विषय मे सिद्ध ।।
किन्तु जतय अभियान, दण्ड वा युद्ध ।
योद्धहि कें थिक उचित पुछिअ अविरुद्ध ।।
युवराज क विचार नृप - नय अनुसार ।
राजस्व क संग्रह, रिपु ग्रहण प्रकार ।।
उभय सिद्ध यदि होइछ एकहि यत्न ।
कंटक शोधन, संकलनहु धन - रत्न ।।

करइछ जखन समर्थन शक्तिसमर्थ ।
कर्ण आदि जत, तखन घमर्थन व्यर्थ ।।
युवराजहु क राजनैतिक अधिकार ।
हमरहु उचित बुझाइछ रण संभार ।।"
छल पहिनहि सँ प्रस्तुत रण अभियान ।
अस्त्र - शस्त्र बल - संबल वाहन - यान ।।
ध्वज - पताक, रणवाद्य, खाद्य कत रंग ।
सेना सेनानी व्यूहित चतुरंग ।।

अवरोध : प्रतिरोध

पहिनहि सँ त्रिगर्तपति घेरल जाय ।
उथल - पुथल छल मचल मत्स्य मे हाय !
तावत् सजि - धजि अस्त्र - शस्त्र संभारि ।
दुर्योधन क व्यूह रचना अनुसार ।।
चलल क्षिप्रगति गर्जन तर्जन सोर ।
धरती अंबर कम्पित करइत जोर ।।
कुरु - सैनिक विराटपुर घेरल जाय ।
चर - चाँचर मे चरइत हाँकल गाय ।।
चर - चरवाह कहल, नृप ! पुर अवरोध ।
धेनु धनक हर्ता क्यौ रिपुदल घोर ।।
व्याप्त नगर भरि रोष, झटिति प्रतिशोध ।
दंड अंत उद्दंड क कंटक शोध ।।
बूढ़ बिराट क युद्ध-मूढ़ अछि चित्त ।
कीचक हत ! जे पूजी रण क निमित्त ।।
जे जत सीमा - सैनिक भट सामंत ।
से सभ लड़य गेल सहजहिं सीमांत ।।
जतय त्रिगर्तराज कयलक अभियान ।
कुरुपतिहि क दुहु दिस दबाब अनुमान ।।
जन - जनपद रक्षा हित पूर्वहिं जाय ।
लड़ि अड़ि रहले उचिते भट - समुदाय ।।

श्वेतकेतु लड़इछ तँह युवा कुमार,
एतय विरल सैनिक दुर्गक आधार,
सर्वोपरि संग्राम क एतहि प्रहार।
किंकर्तव्य - विमूढ़ न सूझ प्रकार।।
रिपु क उत्तरे उत्तर राजकुमार।
छथि अवश्य एखनहु स्वभाव सुकुमार।।
किन्तु अन्तर क कातर, वीर क बोल।
कहइत छथि, हम जैतहुँ रण रिपु टोल।।
मुदा हमर उपयुक्त न सारथि एक।
महारथी संग लड़बा हित रथ टेक।।'

कहल कंक राजा सँ– 'एक उपाय,
वृहन्नला नट क्लीवहु रथी सहाय।
ग्रंथिक तंतिक दुहु छथि अस्त्र-अभिज्ञ,
वल्लव पाकहु रण-परिपाकहु विज्ञ।।
सेवक सेव्य क रण हित होथु सहाय।
आगत विपद, साहसे एक उपाय।।

भुखल - पिआसल कें कण - बिन्दुहु इष्ट।
डुबइत कें तृणहु क आसरा विशिष्ट।।
कंक रंकहु क बल सहायता दान।
रोगातुर क बैद्य जनु अमृत प्रमान।।

लगले गेला बजाओल जत जे व्यक्ति।
देखबथु अपन अपन सभ शक्ति प्रसक्ति।।
करथु सुरक्षित ग्रंथिक गोकुल पंथ।
तंतिक अश्ववाहिनि क करथु प्रबंध।।
वल्लव मल्लराज लय बढ़थु पदाति।
रोकथु जाय तिगर्तराज, बदजाति।।
वृहन्नला उत्तर - रथ गहथु विशेष।
कौरव दलक करथु प्रतिरोध अशेष।।

आदेश क संगहिँ संहृत सभ कृत्य ।
स्वयं कार्य संभृत रहइछ से भृत्य ।।
सहज शत्रु मर्दन थिक मर्द क काज ।
झपटि पड़य स्वयमेव विहग पर बाज ।।

छन मे मोलायल जे छला विराट ।
छथि उत्फुल्ल देखि भट उद्भट ठाट ।।

पुर - परिसर मे हलचल मचल महान ।
अंत:पुरहु सजग छल चंचल प्राण ।।
कोमल कला कलाधर नर्तक - राज
घुंघरू - घँघरा जनिकर तन पर छाज ।
सहसा कवच साजि, कर चर्म कृपान,
शिरस्त्राण, कर धनु - बाण क संधान ।
जे छल पथी कला - वीथी क प्रसिद्ध ।
से संग्राम क रथी सारथी सिद्ध ।।
क्लीब नृत्य रत अंगना क अनुषंग ।
कोना मचाओत रथ चढ़ि बढ़ि रण रंग ।।
चकित उत्तरा लखि परिवर्तित दृश्य ।
गुरु क अनूप रूप देखइत छल शिष्य ।।
कोमल-कड़ी स्वर क अनुगम संगीत ।
वेणु दुंदुभी दूहू वाद्य परिवीत ।।
रानी छथि करइत किछु सोच - बिचार ।
उत्तरा क हृत्तन्त्री झंकृत तार ।।
श्री—वसंत नहि भैरव दीपक ज्वाल ।
वागीश्वरी - बहार न दुर्गा राग ।।

रथ सज्जित, सारथि बृहन्नला, उत्तर रथी यदपि तन कंप ।
आइ विराट क नगर उपप्लव दूर कर'क हित चलल अकंप ।।
भीष्म द्रोण ओ कर्ण संग रण रंग, सुयोधन अछि सन्नद्ध ।
उत्तर हित मध्यम पांडव रथ हाँकि चलल जत रण संबद्ध ।।

× × × ×

पञ्चम सर्ग

दौत्यक विफलता। युद्धोपक्रम

दौत्य श्रीकृष्ण क सुयोधन सभा बिच जखने विफल।
विदुर भीष्म क वचन-रचनहु कुरुपति क मन नहि रुचल॥
साम - दान क, न्याय - औचित्य क कथा जे कटु बुझल।
क्षमा कें दौर्बल्य, विनयहु कें असामर्थ्य गुनल॥

इन्द्रप्रस्थ क सङहि केवल पाँच गाम क माङटा।
ततहु भवबा पड़ल, शूची - अग्र वचन क डाङटा॥
सन्धि - संयोग क जते प्रस्ताव से स्वीकार नहि।
दासता गहि रहथु पांडव, राज्य मे अधिकार नहि॥

अहंकारी केर हुंकार क न किछु उपचार छल।
विग्रह क ग्रह तुलायल, उत्तर धनुष टंकार छल॥
कुरुकुल क मृगशिरा - तृष्णा असीमा बढ़ले जखन।
युद्ध केर अदरा क बदरा बरसते, रुकते न छन॥

× × × ×

एते दिन सँ कौरव क छल - छद्म केर जत योजना।
द्यूत - कपट, अलक्ष्य लाक्षागृह प्रभृतिहु क वंचना॥
राज्य केर अपहरण, द्रुपदा - चीरहरण, अनीति जत।
कपट - पटु दुर्योधन क, दुःशासनक अनरीति कत॥

सकल दुष्कर्म क विपाक, अपार पाप क घट भरित ।
द्रोह - ईर्ष्या छल-कपट विषवृक्ष केर दुष्फल फलित ।।
जते जे भूगर्भ मे छल दवल ज्वाला आन्तरिक ।
फुटल ज्वालामुखी शत मुख महाभारत सामरिक ।।

द्वंद्व ई प्रत्यक्ष धर्म - अधर्म बिच ठनि गेल छल ।
ब्यग्र देश समग्र दुइ दल भय विभक्त उदग्र छल ।।
कौरव क छल पक्ष पर सत्ता क पूजक अधिकतर ।
जे महत्ता देल न्यायहि पांडब क से पक्षधर ।।

एगारह अक्षौहिणी कौरव क सैनिक अधिगणित ।
पांडव क दिस सात मात्रहु रोष उत्तेजित अमित ।।
दुहू दिस योद्धाक दल सन्नद्ध युद्ध क योजनें ।
प्राण निहुछि समुद्यते निजपक्ष - जय क प्रयोजनें ।।

एम्हर भीम भयानकें, भीष्महु ओम्हर रण-भीषणे ।
पार्थ एतय समर्थ, पुनि तहुँ कर्णहु क आकर्षणे ।।
द्रोण अश्वत्थाम कृप कृतवर्म कुरुदल - मंडना ।
वृद्ध रहितहुँ सिद्ध द्रुपद विराट रण रिपु - खंडना ।।

देश - देश क सुभट उद्भट जुटल कोनहु पक्ष धय ।
बुझि पड़य भारत महान क अन्त अन्तक लक्ष्य लय ।।
शकुनि दुःशासन जयद्रथ प्रभृति रण - कपटी विदित ।
एम्हर वीर विशुद्ध अभिमन्यु क समान रथी प्रथित ।।

महाभारत रचयिता छथि कृष्ण द्वैपायन, सुनी ।
द्वारका द्वीपायनी श्रीकृष्णहि क रचना गुनी ।।
धर्मरक्षा न्यायशिक्षा हेतु युद्ध - विधान ई ।
काल उपटाबय चलल वा भारत क उद्यान छी ?

कुरुक्षेत्र क युद्धवार्ता रम्य भीमा रंजिता ।
कहि रहल धृतराष्ट्र सँ संजय यथावत् संचिता ।।
ओम्हर अन्तःपुरहु चंचल समर - अंचल की घटित ।
पृथा सँ उत्तरा घरि सुनि रहलि रण - दूतो कथित ।।

शंख भेरी ध्वनित चहु दिस रथ - तुरग - गज गर्जना ।
पद - पदाति क उभय दल चलइछ परस्पर तर्जना ।।
व्यूह रचना, सैनिक क संयोजना, आक्रमण क्रम ।
दलपति क सेना निरीक्षण नहि कतहु त्रुटि, कोनहु भ्रम ।।

रण क प्रथमहि दृश्य अर्जुन उर विषाद क कालिमा ।
तदनु गीतागायक क कर्मोपदेश क लालिमा ।।
प्रथम दिन अभिमन्यु - भीष्म क बाल - वृद्ध क द्वंद्विता ।
निहत उत्तर - श्वेत, सैनिक हताहत क असंख्यता ।।

दिन द्वितीयहु अद्वितीये भीम - अर्जुन संगरे ।
भीष्म सेनापति क भीषण व्यूह युद्ध भयंकरे ।।
दिवस तेसर पार्थसारथि अस्त्रग्रहण क प्रण बिसरि ।
हाथ लय रथ - चक्र दौड़ल, भीष्म उर भक्ति क लहरि ।।

दिवा चारिम घटोत्कचक पराक्रमहि रण संहरण ।
उभय पक्ष क दक्ष भट कत कयल लड़िभिड़ि मृति वरण ।।
पाँचमहु दिन सुयोधन-सुत लक्ष्मण क सङ रण ठनल ।
पार्थ - सुत अभिमन्यु केर वीरत्वहि क प्राबल्य छल ।।

छठम सातम दिनहु बीतल हताहत कत उभय भट ।
आठमहु दिन घटोत्कच अभिमन्यु हनलन्हि रिपु-कटक ।।
नवम दिन अभिमन्यु-हत पुनि चित्रसेन क बल-वलय ।
किन्तु भीष्म क पराक्रम सँ पांडवहु दल मे प्रलय ।।

देखि घबड़ायल अपन दल कहल श्रीकृष्णहि स्वयम् ।
भीष्म विदित अजेय इच्छामृत्यु वरदानी अयम् ।।
पुछिअ हुनकहि सँ कोना रण - सिंधु उतरब पार ई ।
मृत्यु विधि अपनहिँ कहिअ, हे पितामह ! तदुपाय की ?

निशि - निशीथे कृष्ण संगहि पंच पांडव चरण गहि ।
लेल आशिष, सीख देलन्हि मरण-वरणी भीष्म कहि ।।
शिखंडी के आगु लय जनु मघामेघ झड़ी झरय ।
वाण वर्षण अर्जुनक निःशस्त्र भीष्म उपर पड़य ।।

दशम दिवसहि अस्त सेनापति पितामह भास्करे ।
युद्धपर्व क प्रथम सर्ग समाप्त, पांडव हितकरे ।।
भानु अस्तहु जनु कृशानुक तेज लोकालय गहय ।
द्रोण उद्दीपित सहज नेतृत्व लेलन्हि दय अभय ।।

कयल कर्ण प्रवेश रण मे द्रोण सेनानी जखन ।
उदित भानु - कृशानु जनु प्रलयांत करइत क्षिति - गगन ।।
दिवस एकादशहु - द्वादश द्रोण - व्यूहित कुरु क दल ।
अमृत पिबि जनु मृतहु जन उठि ह्वैछ पूर्वहु सँ प्रबल ।।

किन्तु जखन घटोत्कच क सङ भीष्म प्रबल पराक्रमे ।
सहित सुत - अभिमन्यु अर्जुन जुटल संग्राम क क्रमें ।।
तेरहम दिन रण - अरण्य प्रदग्ध दावाग्नि क लपट ।
सुयोधन उपराग देलन्हि जाय आचार्यक निकट ।।

सैन्य अधिकहु, पितामह आचार्य सन सेनापतिहु ।
कर्ण दुःशासन शकुनि सन मित्र - बान्धव अछैतहुँ ।
देखि रहलहुँ दिनोदिन पांडवेपक्षक प्रबलता ।
बुझि पड़य, मन दय न लड़इछ हमर सेना संहता ।

कटु कथा सुनि द्रोणगुरु मन खिन्न रहितहुँ ज्वलित भय ।
कहल – काल्हुक युद्ध होयत, अहुँक सन्तोष क विषय ।
कोनहु एक महान पांडव - दल प्रधानक हिंसना ।
यदि च अर्जुन अनत, सधते चक्र व्यूह क विरचना ।।

मुदित चित कुरुपति चलल निज शिविर गुरुपद कय प्रणति ।
पार्थ पूर्वहि सँ बझल संशप्तक क आह्वान प्रति ।।
व्यूह चक्र क कयल रचना द्रोण, सुनि से घोषणा ।
चिन्तना पांडव शिविर, के कय सकय प्रतिशोधना ।।

थिर युधिष्ठिर छथि न, चक्र - व्यूह भेदन दुष्करे ।
अर्जुनहु छथि दूर, के दय सकय शत्रुक उत्तरे ।।
मन मलान महान जत जे वीर पांडव – पक्षधर ।
कुरुदल क उत्साह ध्वनि सुनि मंद सबहुक कंठ स्वर ।।

उठि हठहि अभिमन्यु उद्दीपित कहल, चिन्ता न हो ।
भेदि चक्रव्यूह प्रविशब, तात मन शंका न हो ।।
व्यूह भेदन सह प्रवेश क ज्ञात विधि अछि कथ्य ई ।
किन्तु उपसंहार निर्गम बुझल नहि अछि, तथ्य ई ।।

गर्भ . शिक्षा तात चरण क अपूर्ण रहि गेल छल ।
माँ सुभद्रा निद्रिता जें तें न पूर्ण भय सकल ।।
आइ ओही गर्भ - विद्या कें सफल करवा क अछि ।
शत्रु - दल केर व्यूह - बल स्वप्नहुँ विफल करवाक अछि ।।

सबहुँ कहि उठले, यदि च भेदन सफल पुनि कसरि नहि ।
भंग व्यूह क, सहज पुनि रणरंग, निर्गम संग रहि ।।
चतुर्दश दिवसक समर मे हमर सेनानी कुमर ।
जखन छथि अभिमन्यु, मानल अछि विजय निश्चय हमर ।।

भेल जय उद्घोष पांडव शिविर मे, अभिमन्यु जय !
तरुण तरणि क किरण रण मे रिपु हिमहि गलबय चलय ।।
सैन्य शिविरक रोषमय उद्घोष अन्तःपुर शिविर ।
रुचि विरुचि उत्साह-शंका संग आलोकहु - तिमिर ।।

द्रोण-प्रण सुनि, आइ अछि हन्तव्य वीर महान क्यो ।
पांडव क दल मे कने, के की मने, अनुमान क्यो ।।
चक्र व्यूह क भेदन क नेतृत्व अभिमन्यु क उपर ।
सुनि कथा शंकाकुला चित उतरा कंपित-अधर ।।

उत्तराक उत्तेजना : अभिमन्युहुक रणयात्रा

कहि रहलि छथि, समरयात्री आर्यपुत्र क विजय हो ।
कुरुकुल क अन्याय-रात्रि क तिमिरहारी ! उदय हो ।।
शत्रु दुर्मद दमनकारी ! दशो दिश यश निचय हो ।
अहिँ क हाथेँ न्याय - धर्म क जय, अधर्म क विलय हो ।।

धर्मराज क सत्य निष्ठा अहँक रक्षा - कवच हो ।
तातपाद क वीरता बल शक्ति कीलक सुवच हो ।।
द्वारकापति मातुल क अतुलित कृपा केर अर्गला ।
व्यूह दुर्ग प्रवेश हित दुर्गा क शक्तिमयी कला ।।

सुभद्रा जननी क दूध क लाज राख क शान हो ।
क्षात्र धर्म क मर्म - रक्षक अहँक भुज बलवान हो ।।
मातृका द्रुपदा क केश क दशा मन संधान हो ।
उत्तरा - सीमंत - सिंदूर क सफल अभियान हो ।।

वचन गद्गद, दृग सजल, उद्दाम प्रेमाकुल हृदय ।
रण-तिलक चंदन चढ़ाओल पति क शिर उन्नत अभय ।।
कहल पुनि, कय व्यूह भेदन फिरब विजय - श्रीयुते ।
तखन पुनि भुज पुजब वीर ! प्रणाम अर्पित विजयते ।।

वीरता क प्रतीक प्रियतम, प्रियतमा वीरांगना ।
बिदा कयलनि तिलक केसरिया लगाय रणांगना ।।
रोष रिपु प्रति, प्रिया प्रति उर प्रेम उद्वेलित कलित ।
पति क छल; पत्नी क मन वीरत्व करुणा संकलित ।।

व्यूह प्रवेश । संहार-उपसंहार

चक्र-व्यूह क चंक्रमण हित ओम्हर द्रोणहु यत्न कय ।
व्यस्त छथि रथ गज तुरग पदाति अगणित गठित कय ।।
व्यूह-पथ अवरोध हित सज्जित सुभट उद्भट जते ।
दुर्ग द्वार क रोध करइत जयद्रथहि क अनुमते ।।

कर्ण कृप कृतवर्म अश्वत्थाम प्रभृति महारथी ।
भिड़ल छथि शस्त्रास्त्र सज्जित, क्यौ न प्रविशथि रण-पथी ।।
ध्वनित सहसा शंख, दश दिश मुखर स्वर अभिमन्यु जय ।
व्यूह भेदन करय पहुँचल पांडव क दल भए अभय ।।

जलद-पटल क बीच विद्युत चमकि चौंकावय जेना ।
कुरु क व्यूह क बीच प्रविशल युवा सेनानी तेना ।।
वाग वर्षण, खड्ग कर्षण, गदा - शक्ति क घूर्णना ।
अस्त्र-शस्त्र क योजना कय देल व्यूह क भंजना ।।

सिंह शावक जेना वन निर्भय घुमय घन गर्जना ।
मृग शृगाल वराह गज जत जन्तु, करइत तर्जना ।।
कयल सहज प्रवेश एकाकी अभय अभिमन्यु पुनि ।
तूल तुल शत्रु क अतुल सेना तेना से देल धुनि ।।

हन्त ! एकाकी ओम्हर अभिमन्यु व्यूह क अंतरे ।
एम्हर पथ रोकल जयद्रथ पांडव क दल बाहरे ।।
भीम सात्यकि धृष्टद्युम्नहुँ घटोत्कचहु युधिष्ठिरो ।
वश चलल नहि, गति-रहल नहि, झुकल सभ उन्नत शिरो ।।

धर्म मे जे धर्मराजे, बलहु भीम भयानके।
धनुर्धर अर्जुने सहजहिं, पुत्र आत्मा आन के ?

नकुलहु क अनुरूप रूपें, शील सहदेव क कलित।
एकतनु जनु पंच पांडव प्राण अभिमन्युहि मिलत।।

द्वन्द्वयुद्धहु एक – एक हराय, सप्त महारथी।
अतिरथी अभिमन्यु रण बिच संग एकहि सारथी।।

नखत - निकर क बीच एकहु सूर दूरहु उदित भय।
अंधकार विनाश करइछ अरुण सारथि संग लय।।

मघा - मेघ जकाँ उमड़ि बरिसय सहस भट संहतहु।
किन्तु प्रबल बसात उठय हठात, घन क्षत - विक्षतहु।।

घुमय निर्भय एकलहु शत - सहस रिपु भट हताहत।
त्राहि - त्राहि मचाय, चाप नचाय, शर बरसाय कय।।

देखि रुखि रण रंग - भंग क सुयोधन मन कंपिते।
कयल झटिति विचार करिअ प्रहार जत जे संहते।।

अस्त्र - शस्त्र चलाय कयल निरस्त्र, अन्याय क विधा।
एक अभिमन्यु क उपर अनेक योद्धा एकधा!!

सारथी हत, विरथ, टूटल धनु, न करहु कृपाण धरि।
करय लागल निरस्त्रहि पर अस्त्र शस्त्र निशान अरि।।

विरथ छल अभिमन्यु एकल, ओम्हर सप्त महारथी।
एक संग प्रहार कय संहार कयलक उत्पथी!!

अन्तःपुर व्यथा

अस्त असमय भानु घेरल घन सघन तिमिरावली।
हन्त! चक्रव्यूह मे हत भुवनविजयी भट बली।।

एम्हर कुरुदल हर्ष उन्मत, विकल उत पांडव - वलय।
अहह! अंतःपुर व्यथा क कथा अकथ, के कहि सकय।।

सुभद्रा तंद्रा पड़लि, कृष्णा क उर करुणा सघन ।
पृथा पृथके छथि व्यथाकुल, कुलकुटुं बिनि जल नयन ।।

किन्तु जनि सिंदूर सीमंतक स्यमंतक मणि लुटल ।
उत्तरा निश्चेतना छथि छिन्न तरु क लता टुटल ।।

श्वास चलइछ आश तें जीवन क बुझि पड़ अनुमिता ।
विधि चिकित्सक बुझि व्यथा कयलन्हि व्यवस्था तदुचिता ।।

मूर्छना मे रहथु नवला वधू विधुरा अचेतनि ।
विधि लिखित जनिका असह विरह क व्यथा सहवा क छनि ।।

ओम्हर अर्जुन - जनार्दन वध कय फिरल संशप्तक क ।
सुनल चक्रव्यूह-गत सुत निहत रण रथि - सप्तक क ।।

जयद्रथ पथ रोकि राखल, पांडव क दल रुद्ध जें ।
प्रण कयल सूर्यास्त पूर्वहि वध हुनक अति क्रुद्ध तें ।।

ओकर प्रातहि रवि अछैतहि जयद्रथ - वध संभवा ।
अग्रिमहि दिन द्रोण निपतित 'कुंजरो वा नरो वा' ।।

कर्ण सेनानी क क्रम - विक्रम दिवस दुइ सार्धके ।
शल्यहु क सेनापतित्व क समय मात्र दिनार्धके ।।

दिन अठारह मात्र सैन्य अठारहो अक्षौहिणी ।
युद्ध - वेदी बनल इंधन ज्वल महाभारत धुनी ।।

सुयोधन उरु - भंग अन्तिम समर - उपसंहार मे ।
सौप्तिकहुवध - पर्व अश्वत्थामहि क अभिचार मे ।।

महाभारत भव्य भारत कें उजारि - पजारि कय ।
शान्ति - अनुशासन क पाठ पढ़ाय देल अधारि कय ।।

यज्ञ कतबहु रचल किन्तु न कालिमा हिंसा नशल ।
महाभारत मचल पुनि भारत महान न बनि सकल ।।

षष्ठ सर्ग

महाभारतक उपसंहरण । निर्वेद-वचन

भारत क उद्यान जारि - उजारि निर्मम ।
बन्धु - द्रोह क ज्वलित दावानल क उपशम ।।

बितल दिवस अठारहो उत्ताल उन्मत ।
प्रलय - तांडव महाकाल क युद्ध उद्धत ।।

अठारह अक्षौहिणी समराय स्वाहा ।
बन्धु संहार क मचौल दिगंत हाहा ।।

जखन नहि तरु - गुल्म इंधन बचल रंचहु ।
शेष द्वेषानल - शिखा तखनहि उदंचहु ।।

भारत क दुर्भाग्य ! धर्मक्षेत्र परती ।
महाभारत वीर - शून्या कयल धरती ।।

हंत ! मालव - भूमि परिणत मरु - थलहि मे ।
शरद हास-विकास शिशिर क पतझरहि मे ।।

जे पराजित शक्ति सहजहिँ भू-विलंठित ।
विजय - पक्षहु लक्ष्य विकल विषाद - कुंठित ।।

भूमि शूची - अग्र नहि दातव्य जनिका ।
स्वयं भूतल तजि लिखल गन्तव्य तनिका ।।

भीष्म रण मे दस सहस्र क नित्य हंता ।
छथि पड़ल शर - सेज पर, मृत्यु क सिहता ।।

द्रोण रण - वेदी क अग्निहु छथि मिझायल ।
कर्ण - शल्य क अस्त्र - शस्त्र सबहु बिझायल ।।

उभय खंडित पक्ष, विजयहु पंगु अंगे ।
युद्ध - हिंसा निरत विश्व क शान्ति भंगे ।।

जकर कारण वंश कत निर्वंश देखिअ ।
शत सुत क जनकहु क कुल - विध्वंस लेखिअ ।।

पिता वंचित - पुत्र, कनइत कते माता ।
पितामह निरपत्य, बन्धु - विहीन भ्राता ।।

अमित सीमंतिनी - शिर सिंदूर रिक्ते ।
जनपदहु जन - हीन, जीवन सभ क तिक्ते ।।

धर्मराज नराज अपनहि उपर विह्वल ।
राज्य - लोभहि कयल जन - संहार अविरल ।।

शून्य मन अर्जुन क, विनु अभिमन्यु जीवन ।
व्यर्थ, अर्थ विना जेना हो पद क योजन ।।

उत्तरा शिष्या बधू ! नहि सहल जाइछ ।
अनुत्तरिते प्रश्न, नहि किछु कहल जाइछ ।।

उत्तराक व्यथा-कथा

पृथा व्यथिता, सुभद्रा निद्रा न, विधुरा ।
उत्तरा, जनि हृदय - धन विधि छिनल निठुरा ।।

पति - चिता चढ़ली न अन्तर्वती विमना ।
पांडु - कुल - अंकुर जोगाबय जिबथि कहुना ।।

वेदना - वेदी बनलि विरहाग्नि ज्वालित ।
श्वास - श्वास चढ़ाय समिधा, आत्म आहुति ।।

दृग - जलहि अभिषिक्त, अहनिश ज्वलित प्राणे ।
तपथि प्रियतम स्मरण करइत, निरत ध्याने ।।

दिवंगत जे देवता, नहि नयन – गोचर ।
ज्योति जाग्रत आब स्वप्नहिलोक संचर ।।

पावसी दृग देखि मानस हंस दूरे ।
जीवन क ऋतु शरद आब न, भाग्य क्रूरे ।।

विजेता पांडव क पौरुष पुर - पुरस्सर ।
किन्तु अन्त:पुर सतत गुंजित करुण स्वर ।।

सुभद्रा छथि विकलि अपनहि पुत्र - विरहें ।
हुनि न बोधि - प्रबोधि सकती कोनहु तरहें ।।

पृथा, पार्थ न द्रुपदजा, भद्रा न एकहु ।
उत्तरा केर करुण प्रश्न क उतर ककरहु ।।

उत्तरा ओ श्रीकृष्ण : कर्तव्य बोध

देय उत्तर उत्तरा कें स्वयं जनिका ।
देखं छी अन्तः शिविर प्रविशैत तनिका ।।

अन्त मे अन्तिमे विधि संयोग सहजहिं ।
पहुँचला अन्तःपुरहि श्रीकृष्ण अपनहि ।।

जनिक दर्शन, दर्शन क थिक चरम सीमा ।
वचन श्रुति - स्मृति ज्ञान - विज्ञानहि क खीमा ।।

विदित समदर्शी तदपि छथि वशी भक्त क ।
काल - भक्षक बनथि कखनहु विश्व - रक्षक ।।

उत्तरा दृग अश्रु भरि करइत प्रणामे ।
पुछय चाहल, भेल की परिणाम मामे ।।

बूझि न सकइछ लोक लीलामय क माने ।
महाभारत सँ कोना भारत महाने ।।

कंठ छल अवरुद्ध' नहि किछु शब्दनिःसृत ।
स्वयं अन्तर्यामि प्रभु-मुख वचन हित - मित ।।

'करिअ नहि अनुशोचना कल्याणि ! जकर उपाय नहि ।
विधि विधान प्रमान मानिय, एतय आन सहाय नहिं ।।
शोचनीय कुमार सौभद्रेय नहि लहि वीर गति ।
क्षात्रधर्म क रीति रण मे मरण - वरणी शत्रु हति ।।

भेल हुनक शरीर भौतिक कथाशेष विनश्वरे ।
अमर कीर्ति - कलेवरे पुनि आ निशाकर - भास्करे ।।
धर्म - पथ चलि जीवन क रथ दिवंगत ओ देवता ।
पुजिअ गुन - गन सुमिरि, जोगबिअ वंश-बीज क तरुलता ।।

मृत्यु विदित शरीरहि क, आत्मा सदा अविनश्वरे ।
सन्तति क रूपें तदंश चलैछ वंश-परम्परे ।।
भरत वंश क अंत होइत किन्तु गर्भ क अर्भके ।
जगाओत पांडव क ज्योति अखंड अहिँक, तदर्थके ।।

अछि अहँक दायित्व सर्वोपरि, सम्हारिअ उत्तरे !
वीर-पत्नी रहि बनिअ पुनि वीर - जननी वत्सले !'
जगन्मान्य क वचन कें दय भक्ति-भावें मान्यता ।
उत्तरा केर उत्तरे मे समर्पण क अनन्यता ।।

'वीर - पत्नी क्षत्रियाणी बनि अनिष्टे ।
आब नहि प्रभु ! वीर-माता बनब इष्टे ।।

पति क प्रति प्रेमार्पण क अवसर अधूरे ।
वीर - गति संप्राप्त तनि हित तपब पूरे ।।

हृदय - मंदिर मे प्रतिष्ठित दिव्य प्रतिमा ।
नित चढ़ा प्रेमाश्रु गायब हुनक महिमा ।।

रूप - बल वैभव चरित - गुण - शील अनुपम ।
स्मरण - मणि सँ सजायब जीवन क क्षण हम ।

द्रौणि - द्रोहहुँ प्रभु - कृपें जे गर्भ रक्षित ।
स्मृति क तन्तु विशेष शिशु अंकहि परीक्षित ।।

देखि मुख हुनि दुख बिसरि सुख लहब कम नहि ।
निष्कलंक मयंक अंकहि हेरि सहजहिं ।।

सिखल ललित कला, लिखल छल द्वंद्व अनुभव ।
शान्ति - अनुशासन न यौद्धिक पर्व संभव ।।

महाभारत युद्ध पर्व क अंत 'अंशे ।
रचित उचिते भागवत खिलपर्व वंशे ।।

आसुरी हिंसा कतय दैवी अहिंसा !
न्याय प्राप्तिहु हित उचित प्रेमानुशंसा ।।

भरत - वंश क ध्वंस, कलहें महाभारत ।
भागवत प्रेम क पथें चलि द्वंद्व आरत ।।

शक्ति रथ चढ़ितहुँ न रन- वन घुमथु भीमा ।
भक्ति - पथ चलि सहज पहुँचथु पथ असीमा ।।

किन्तु कायरता न कखनहुँ समर्थित हो ।
क्षमा नहि अक्षम क किन्नहु समर्पित हो ।।

न्याय - यज्ञहि मात्र हिंसा कथंचित हो ।
कथित ललितहि अतिशयोक्तिहु प्रपंचित हो ।।

हमर शिक्षा सरणि एतवे, भौतिकहु यदि भावना हो ।
मानसिक नहि बाधना हो, ध्येय आत्मिक साधना हो ।।'

सुनलन्हि कृष्ण सतृष्ण ई उत्तरा क सुविचार ।
आशिष देलन्हि, हो सफल अहँक सहिष्णु विचार ।।

जकर अहाँ अभिभाविका, तकर भविष्य प्रसिद्ध ।
दीक्षित करिअ परीक्षिते, परम भागवत सिद्ध ।।

परम भागवत सिद्ध प्रसिद्धे होथु परीक्षित ।
शुक - मुख सुनि शुभकथा अमृत पद होथु प्रतिष्ठित ।।
कलि-कलहहु, अभिशापहु-सापहु नहि किछु बाधा ।
उत्तरा क उत्तरकालिक जीवन निर्बाधा ।।

रन-वन जीवन सफलतम, करबे अहँ कल्याणि ?
शक्ति निहित पति मे शुभे ! भक्ति पुत्र मे आनि ।।

❀